IJAER/May-June 2017 /Volume-5/Issue-6 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

वर्तमान संदर्भ में सामाजिक न्याय

डॉ. राम चरण मीना

राजनीति विज्ञान विभाग ;कोटा विश्वविद्यालय कोटा

प्राचार्य अमरचंद राजकुमारी बरडिया जैन विश्वभारती स्नातकोत्तर महाविद्यालय

छबड़ा जिला बारांए राजस्थान

सार

द्वारा मानव का शोषण समाप्त करना है, प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे अवसर मुहैया कराना है जिनसे वह अपनी योग्यताओं का एक विचार के रूप में सामाजिक न्याय (social justice) की बुनियाद सभी मनुष्यों को समान मानने के आग्रह पर आधारित है। इसके मुताबिक किसी के साथ सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पूर्वग्रहों के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। हर किसी के पास इतने न्यूनतम संसाधन होने चाहिए कि वे 'उत्तम जीवन' की अपनी संकल्पना को धरती पर उतार पाएँ। न्याय का परम्परागत दृष्टिकोण जहां व्यक्ति के चरित्र से सम्बन्ध रखता है वहीं आधुनिक दृष्टिकोण का मुख्य जोर मानव की भौतिक, आर्थिक उन्नति के सामाजिक पक्ष पर है। न्याय के इस आधुनिक दृष्टिकोण को ही 'सामाजिक न्याय' के रूप में जाना जाता है। सामाजिक न्याय की धारणा प्रमुख रूप से 19वीं शताब्दी में न्याय के परम्परागत आदर्श की प्रतिक्रिया के रूप में प्रकट हुई। सामाजिक न्याय मांग करता है कि धन एवं विशेषाधिकार से उत्पन्न असमानता को दूर किया जाए। धन, धर्म, जाति, लिंग व जन्म स्थान आदि के आधार पर किसी भी व्यक्ति के साथ न तो विभेद किया जाए, न किसी को विशेष सुविधाएं दी जाएं। वस्तुतः सामाजिक न्याय का मुख्य उद्देश्य मानव अधिकतम विकास कर सके। वर्तमान विश्व में सामाजिक न्याय की अवधारणा का महत्व विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों की शासन प्रणालियों में अधिक प्रासंगिक है।

मुख्य शब्दः सामाजिक, न्याय

परिचय

सामाजिक न्याय एक क्रांतिकारी अवधारणा है जो अर्थ प्रदान करती है और जीवन के लिए महत्व और कानून के शासन को गतिशील बनाता है। जब भारतीय समाज अपने द्वारा सामाजिक–आर्थिक असमानता की चुनौती का सामना करना चाहता है कानून और कानून के शासन की सहायता से; यह हासिल करना चाहता है बिना किसी हिंसक संघर्ष के आर्थिक न्याय। कल्याणकारी राज्य का विचार है कि सामाजिक न्याय के दावों को कार्डिनल माना जाना चाहिए और सर्वोपरि। सामाजिक न्याय कोई अंधी अवधारणा नहीं है। यह न्याय करना चाहता है राज्य के सभी नागरिक। सामाजिक न्याय को अपनाने के द्वारा प्राप्त किया जाना चाहिए आवश्यक और उचित उपाय। वह शीघ्र ही कहा गया है, अवधारणा है सामाजिक न्याय और उसके निहितार्थ। इस प्रकार सामाजिक न्याय शब्द एक है व्यापक अवधि ताकि सामाजिक न्याय और

आर्थिक न्याय दोनों को शामिल किया जा सके। सामाजिक न्याय की अवधारणा विविध से परिपूर्ण है अर्थ यह एक कल्याणकारी राज्य के बराबर है। यह माना जाता है समतामूलक समाज के समान। इसे एक घटना के रूप में माना जाता है कानून का शासन। यह सामाजिक कल्याण के साथ सह–विस्तृत है। क्योंकि सामाजिक न्याय मुख्य रूप से सभी प्रकार की असमानताओं के उन्मूलन में रहने वाला माना जाता है जो धन की सभी प्रकार की असमानताओं के सहवर्ती हैं और अवसर, जाति, जाति, धर्म, भेद और उपाधि। की घोषणा अमेरिकी स्वतंत्रता 1776 ने इसे अविभाज्य व्यक्ति में खोजा समानता जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार। की फ्रांसीसी घोषणा मनुष्य के अधिकार 1789 ने इसे प्राकृतिक रूप से अभेद्य रूप से खोजा और मनुष्य के अक्षम्य अधिकार। ऐसे अधिकारों को स्वाभाविक माना जाता हैक्योंकि सभी पुरुषों को समान युद्ध के अधिकार समान रूप से प्राप्त हैं।

1.सामाजिक न्याय की अवधारणा

सामाजिक–आर्थिक न्याय की अवधारणा एक जीवित अवधारणा है और देती है कानून के शासन के लिए सार और आदर्श के अर्थ और महत्व एक कल्याणकारी राज्य। भारतीय संविधान बलों का एक उदाहरण है सामाजिक–आर्थिक न्यायशास्त्र में काम करते हैं। यह निर्देश निर्धारित करता है देश के शासन के लिए मौलिक राज्य नीति के सिद्धांत और एक सामाजिक व्यवस्था की व्याख्या करता है जिसमें न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक, राष्ट्रीय जीवन के सभी संस्थानों को सूचित करेगा सामाजिक न्याय सभी को हटाने के उद्देश्य को अपने दायरे में ले लेता है असमानताओं और सामाजिक में सभी नागरिकों को समान अवसर प्रदान करना मामलों के साथ–साथ आर्थिक गतिविधियों। शब्द "बिना संदेह के न्याय मतलब समाज के वंचित और कमजोर वर्गों को न्याय दिलाना समतावादी व्यवस्था जिसके तहत कमजोरों को अवसर प्रदान किए जाते हैं समाज के वर्गों।

2.नागरिक समाज में सामाजिक न्याय

मूल नागरिक समाज के रूसो द्वारा जहां अंतर और समय के साथ–साथ विषमताएँ इतनी भीषण हो गईं कि एक माँग सामाजिक न्याय सामान्य रूप से मानव जाति की एक स्वाभाविक चिल्लाहट थी। में दार्शनिकों के मतानुसार मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी के रूप में वर्णित किया गया है। जब नागरिक समाज एक प्रशासनिक इकाई के रूप में विकसित हुआ, आचरण के नियम एक राजनीतिक मंजूरी हासिल कर ली और उनमें से एक उल्लंघन को दोषी ठहराया गया विधायी प्रतिबंधों के माध्यम से।

3.भारत के संविधान के तहत सामाजिक न्याय

संविधान की एक तस्वीर हमें सही परिप्रेक्ष्य देगी की आकांक्षा के रूप में सामाजिक न्याय क क्षेत्र और स्थान की सराहना राष्ट्र भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश पी.एन. भगवती अन्य बातों के साथ मनाया गयारू "आज न्यायिक प्रक्रिया में एक विशाल सामाजिक क्रांति हो रही है,कानून तेजी से बदल रहा है और गरीबों की समस्या सामने आ रही है सबसे आगे। कोर्ट को नए तरीके और डिवाइस को नया करना होगा लोगों के बड़े पैमाने पर न्याय तक पहुंच प्रदान करने के लिए रणनीतियां जिन्हें उनके मूल मानवाधिकारों से वंचित रखा गया है और जिन्हें स्वतंत्रता और स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं है।

सामाजिक न्याय व्यक्तियों और समाज के बीच संतुलन का संबंध है, जिसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता से लेकर उचित विशेषाधिकार के अवसरों तक, धन के अंतर के वितरण की तुलना करके मापा जाता है । में पश्चिमी पुराने के साथ–साथ एशियाई संस्कृतियों,सामाजिक न्याय की अवधारणा अक्सर कि व्यक्ति अपने को पूरा सुनिश्चित करने की प्रक्रिया करने के लिए भेजा गया है सामाजिक भूमिकाओं और प्राप्त क्या समाज से उनके कारण था। सामाजिक न्याय के लिए वर्तमान वैश्विक जमीनी स्तर के आंदोलनों में, सामाजिक न्याय के लिए बाधाओं को तोड़ने पर जोर दिया गया है। सामाजिक गतिशीलता,सुरक्षा जाल का निर्माण और आर्थिक न्याय।

सामाजिक न्याय समाज की संस्थाओं में अधिकार और कर्तव्य प्रदान करता है, जो लोगों को सहयोग के बुनियादी लाभ और बोझ प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। संबंधित संस्थानों में अक्सर कराधान , सामाजिक बीमा , सार्वजनिक स्वास्थ्य , पब्लिक स्कूल , सार्वजनिक सेवाएं , श्रम कानून और बाजारों का विनियमन शामिल होता है , ताकि धन का उचित वितरण और समान अवसर सुनिश्चित किया जा सके।

व्याख्याएं जो न्याय को समाज के पारस्परिक संबंध से जोड़ती हैं, सांस्कृतिक परंपराओं में अंतर द्वारा मध्यस्थता की जाती हैं, जिनमें से कुछ समाज के प्रति व्यक्तिगत जिम्मेदारी पर जोर देती हैं और अन्य सत्ता तक पहुंच और इसके जिम्मेदार उपयोग के बीच संतुलन पर जोर देती हैं। इसलिए, आज सामाजिक न्याय का आह्वान किया जाता है, जैसे कि बार्टोलोमे डे लास कैसास जैसे ऐतिहासिक आंकड़ों की पुनर्व्याख्या करते हुए,मानव के बीच मतभेदों के बारे में दार्शनिक बहस में, लिंग, जातीय और सामाजिक समानता के प्रयासों में, प्रवासियों , कैदियों के लिए न्याय की वकालत करने के लिए।

पर्यावरण , और शारीरिक और विकासात्मक रूप से विकलांग जबकि सामाजिक न्याय की अवधारणा शास्त्रीय और ईसाई दार्शनिक स्रोतों में पाई जा सकती है, प्लेटो और अरस्तू से लेकर हिप्पो के ऑगस्टाइन और थॉमस एक्विनास तक, शब्द ष्सामाजिक न्यायष 18 वीं शताब्दी के अंत में अपने शुरुआती उपयोग पाता है –यद्यपि अस्पष्ट सैद्धांतिक या व्यावहारिक के साथ अर्थ। इस प्रकार इस शब्द का प्रयोग अतिरेक के आरोपों के अधीन थाकृक्या न्याय के सभी दावे "सामाजिक" नहीं हैं? – और अलंकारिक उत्कर्ष, शायद, लेकिन जरूरी नहीं, वितरणात्मक न्याय के एक दृष्टिकोण को बढ़ाने से संबंधित है। प्राकृतिक कानून में शब्द के गढ़ने और परिभाषा में, लुइगी टापरेली, एसजे के सामाजिक वैज्ञानिक ग्रंथ, १८४० के दशक की शुरुआत में, टापरेली ने प्राकृतिक कानून सिद्धांत की स्थापना की जो भाईचारे के प्रेम के इंजील सिद्धांत के अनुरूप है– यानी सामाजिक न्याय समाज में मानव व्यक्ति की अन्योन्याश्रित अमूर्त एकता में स्वयं के प्रति कर्तव्य को दर्शाता है। १८४८ की क्रांति के बाद इस शब्द को आम तौर पर एंटोनियो रोसमिनी–सेर्बती के लेखन के माध्यम से लोकप्रिय बनाया गया था।

उद्देश्य

1. सामाजिक न्याय से तात्पर्य है समाज के सभी सदस्यों के मध्य बिना किसी भेदभाव के समता, एकता और मानव अधिकारों की स्थापना करना तथा व्यक्ति की प्रतिष्ठा, गरिमा को विशेष महत्व प्रदान करना हैं.
2. भारतीय समाज का रुढ़िवादी सामाजिक दृष्टिकोण

संस्कृति

यह एक आश्चर्यजनक सत्य है कि पिछले पचास वर्षो में विश्व के संपूर्ण संघर्षों में से लगभग पचास प्रतिशत संघर्ष सांस्कृतिक प्रकृति के रहे हैं। यह इस दावे को समर्थन देता है कि पिछले पचास वर्षों में संस्कृतियों का प्रभुत्व रहा है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि इसके पहले संस्कृतियों का कोई महत्व नहीं था परन्तु इसका यह अर्थ जरूर है कि पिछले पचास वर्षों के समय–काल में संस्कृतियों का उपयोग सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं एवं संस्थाओं के विश्लेषण में एक महत्वपूर्ण अवयव के रूप में किया जाने लगा। अब मानवता के निर्माण में संस्कृति के महत्व को पहचाना गया और सामाजिक समस्याओं के समाधान के रूप में संस्कृतियों के सामर्थ्य को लेकर अनेक परिवाद प्रांरभ हुए। समाज के विभिन्न समस्याओं के संदर्भ में सांस्कृतिक पहचान एवं सांस्कृतिक असमानता को आधारभूत कारण माना जाने लगा। बहुसंस्कृतिवाद संस्कृतियों की समानता एवं पहचान हेतु एक वैचारिक आन्दोलन है।

सामाजिक न्याय, समाज के लिए एक अपेक्षित एवं आवश्यक अवधारणा है। सामाजिक न्याय की अनुपस्थिति सामाजिक बहिष्करण को जन्म देती है। सामाजिक बहिष्करण सामाजिक समरसता एवं सद्भाव को क्षति पहुँचाता है तथा लोकतंत्र को कमजोर करता है। सांस्कृतिक असमानता सामाजिक न्याय के प्रतिकूल होती है परन्तु बेशर्त समानता भी कभी–कभी सामाजिक न्याय के विपरीत हो जाती है। अतः बहुसंस्कृतिवाद सामाजिक न्याय के अनुकूल एवं प्रतिकूल दोनों ही हो सकता है।

वर्तमान पुस्तक में बहुसंस्कृतिवाद एवं सामाजिक न्याय के इन्हीं गतिमानों के व्याख्या की कोशिश की गयी है। सहयोगी अवधारणाओं के व्याख्या की सहायता से बहुसंस्कृतिवाद को सामाजिक न्याय की दिशा में एक सकारात्मक कदम के रूप में स्थापित करने हेतु उपलब्ध तर्कों का परीक्षण इस पुस्तक का उद्देश्य है।

सामाजिक न्याय

एक विचार के रूप में सामाजिक न्याय (social justice) की बुनियाद सभी मनुष्यों को समान मानने के आग्रह पर आधारित है। इसके मुताबिक किसी के साथ सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पूर्वग्रहों के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। हर किसी के पास इतने न्यूनतम संसाधन होने चाहिए कि वे 'उत्तम जीवन' की अपनी संकल्पना को धरती पर उतार पाएँ। विकसित हों या विकासशील, दोनों ही तरह के देशों में राजनीतिक सिद्धांत के दायरे में सामाजिक न्याय की इस अवधारणा और उससे जुड़ी अभिव्यक्तियों का प्रमुखता से प्रयोग किया जाता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि उसका अर्थ हमेशा सुस्पष्ट ही

होता है। सिद्धांतकारों ने इस प्रत्यय का अपने–अपने तरीके से इस्तेमाल किया है। व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में भी, भारत जैसे देश में सामाजिक न्याय का नारा वंचित समूहों की राजनीतिक गोलबंदी का एक प्रमुख आधार रहा है। उदारतावादी मानकीय राजनीतिक सिद्धांत में उदारतावादी–समतावाद से आगे बढ़ते हुए सामाजिक न्याय के सिद्धांतीकरण मां कई आयाम जुड़ते गये हैं। मसलन, अल्पसंख्यक अधिकार, बहुसंस्कृतिवाद, मूल निवासियों के अधिकार आदि। इसी तरह, नारीवाद के दायरे में स्त्रियों के अधिकारों को ले कर भी विभिन्न स्तरों पर सिद्धांतीकरण हुआ है और स्त्री–सशक्तीकरण के मुद्दों को उनके सामाजिक न्याय से जोड़ कर देखा जाने लगा है। यद्यपि एक विचार के रूप में विभिन्न धर्मों की बुनियादी शिक्षाओं में सामाजिक न्याय के विचार को देखा जा सकता है,।

प्राकृतिक न्याय

प्राकृतिक न्याय (Natural justice) न्याय सम्बन्धी एक दर्शन है जो कुछ विधिक मामलों में न्यायपूर्ण (just) या दोषरहित (fair) प्रक्रियाएं निर्धारित करने एवं उन्हे अपनाने के लिये उपयोग की जाती है। यह प्राकृतिक विधि के सिद्धान्त से बहुत नजदीक सम्बन्ध रखती है। आम कानून में श्प्राकृतिक न्यायश दो विशिष्ट कानूनी सिद्धांतों को संदर्भित करता है–.

राजनैतिक आन्दोलन

उस सामाजिक आन्दोलन को राजनैतिक आन्दोलन (political movement) कहते हैं जिसका क्षेत्र और स्वरूप राजनीति हो। राजनैतिक आंदोलन किसी एक मुद्दे को लेकर चलाये जा सकते हैं या बहुत से मुद्दों को लेकर। राजनैतिक दल और राजनैतिक आन्दोलन में अन्तर यह है कि राजनैतिक आन्दोलन अपने सदस्यों को चुनकर सरकारी पद पर बैठाने के लिये नहीं किये जाते बल्कि इसका उद्देश्य यह होता है कि नागरिकों एवं सरकार को आन्दोलन के मुद्दों के पक्ष में कार्य करने के लिये राजी किया जाय। राजनैतिक आन्दोलन वस्तुतः किसी सामाजिक समूह द्वारा राजनैतिक लाभ प्राप्त करने एवं राजनैतिक श्जमीनश प्राप्त करने के लिये किये गये संघर्ष का नाम है।

समतावाद

सामाजिक और राजनीतिक चिंतन में समतावाद (Egalitarianism) एक स्थापित लेकिन विवादित अवधारणा है। समतावाद का सिद्धांत सभी मनुष्यों के समान मूल्य और नैतिक स्थिति की संकल्पना पर बल देता है। समतावाद का दर्शन ऐसी व्यवस्था का समर्थन करता है जिसमें सम्पन्न और समर्थ व्यक्तियों के साथ–साथ निर्बल, निर्धन और वंचित व्यक्तियों को भी आत्मविकास के लिए उपयुक्त अवसर और अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त हो सकें। समतावाद समाज के सब सदस्यों को एक ही शृंखला की कड़ियाँ मानता है

जिसमें मज़बूत कड़ियाँ कमज़ोर कड़ियों की हालातसे अप्रभावित नहीं रह सकतीं। उसका दावा है कि जिस समाज में भाग्यहीन और वंचित मनुष्य दुःखमय, अस्वस्थ और अमानवीय जीवन जीने को विवश हों, उसमें भाग्यशाली और सम्पन्न लोगों को व्यक्तिगत उन्नति और सुख समृद्धि प्राप्त करने की असीम स्वतंत्रता नहीं दी जा सकती। वस्तुतः समतावाद स्वतंत्रता और समानता में सामंजस्य स्थापित करना चाहता है। इसे एक विवादितसंकल्पना इसलिए कहा गया है कि समानता के कई स्वरूप हो सकते हैं और लोगों के साथ समान व्यवहार करने के भी अनेक तरीके हो सकते हैं।

समाजवादी इंटरनेशनल

समाजवादी इंटरनेशनल''' का प्रतीक–चिह्न (लोगो) समाजवादी इंटरनेशनल दलों द्वारा शासित देश समाजवादी इंटरनैशनल (Socialist International) विश्व के लोकतांत्रिक समाजवादी दलों का संघ है जिसका मुख्य कार्यालय लंदन में है। इसका मूल ध्येय मनुष्य द्वारा मनुष्य के तथा राष्ट्र द्वारा राष्ट्र के शोषण का अंत करना और राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक न्याय की स्थापना करना है। सभी महाद्वीपों के मजदूर तथा लोकतांत्रिक समाजवादी दल इसमें हैं और अपनी अपनी राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय नीति में स्वाधीन हैं तथा किसी एक मतवाद अथवा पंथ के अनुयायी नहीं हैं। यह इंटरनैशनल अपने सदस्यों में पारस्परिक संबंधों को दृढ़ करने और सहमति के आधार पर उनकी राजनीतिक अभिवृत्तियों को समन्वित करने का प्रयत्न करता है और साम्राज्यविरोधी तथा पूँजीवाद–विरोधी होने के साथ साम्यवाद–विरोधी भी है। प्रथम और द्वितीय इंटरनैशनल के उत्तराधिकारी के रूप में इसने सन् १९६४ में अपनी जन्मशती मनाई। दृ

व्यावसाय–नीति

व्यावसाय–नीति (बिजनेस एथिक्स या कारपोरेट एथिक्स) नैतिकता का वह रूप है, जो कारोबारी माहौल में पैदा हए नैतिक सिद्धांतों और नैतिक समस्याओं की जांच करता रहता है और उनके सन्दर्भ में कुछ मानदण्डों की स्थापना करता है। यह व्यवसाय के आचरण से जुड़े सभी पहलुओं पर लागू होता है और यह व्यक्तियों और व्यापार संगठनों के आचरण पर समग्र रूप से प्रासंगिक है। व्यावहारिक आचार नीति एक ऐसा क्षेत्र है जिसका सम्बंध कई क्षेत्रों में पैदा हुए नैतिक सवालों से है जैसे चिकित्सीय, तकनीकी, कानूनी और व्यावसायिक नैतिकता। २१वीं सदी में तेजी से अंतरात्मा केंद्रित बाजारों के बढ़ने के बाद और अधिक नैतिक व्यवसाय प्रक्रिया और कार्रवाई (जिसे नैतिकतावाद कहते हैं)

अन्य पिछड़ा वर्ग

भारतीय सरकार की इमारत अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) एक वर्ग है, जो जातियाँ वर्गीकृत करने के लिए भारत सरकार द्वारा प्रयुक्त एक सामूहिक शब्द है। यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के साथ–साथ भारत की जनसंख्या के कई सरकारी वर्गीकरण में से एक है श्भारतीय संविधान में ओबीसी ष्सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों श्के रूप में वर्णित किया जाता है, और भारत सरकार उनके सामाजिक और शैक्षिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए हैं – उदाहरण के लिए, ओबीसी सार्वजनिक क्षेत्र के रोजगार और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में 27: आरक्षण के हकदार हैं। जातियों और समुदायों के सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक कारकों के आधार पर जोड़ा या हटाया जा सकता है 'और इनको।सामाजिक न्याय और अधिकारिता भारतीय मंत्रालय द्वारा बनाए रखा ओबीसी की सूची, गतिशील है। 1985 तक, पिछड़ा वर्ग के मामलों में गृह मंत्रालय में पिछड़ा वर्ग प्रकोष्ठ के बाद देखा गया था। कल्याण की एक अलग मंत्रालय अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों से संबंधित मामलों के लिए भाग लेने के लिए (सामाजिक एवं अधिकारिता मंत्रालय को) 1985 में स्थापित किया गया था। अन्य पिछड़े वर्गों के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण से संबंधित कार्यक्रमों के कार्यान्वयन, और अन्य पिछड़ा वर्ग, पिछड़ा वर्ग के लिए राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम और राष्ट्रीय आयोग के कल्याण के लिए गठित दो संस्थानों से संबंधित मामले हैं'

सामाजिक न्याय की कसौटी और गांधी दर्शन

आज के जमाने में भी विश्व के विभिन्न प्रांतों में मानवाधिकारों की रक्षा के आंदोलन में हगांधीजी का जीवन और संघर्ष एक महान प्रेरणा है। अमेरिका में "णांग समुदाय के अधिकारों के लिए लड़ाई करने वाले मार्टिन लूथर किंग, दक्षिण अफ्रीका में नेल्सन मंडेला, अमेरिका के प्रथम अश्वेत राष्ट्रपति बराक ओबामा या बर्मा में इक्कीस साल तक बंदी रहने के बाद हाल ही में मुक्त हुई आंग सान सू की– सभी ने गांधीजी को अपना आदर्श माना। फ़िर भी वर्तमान समय में गांधी की के विचार कितने प्रासंगिक हैं, ये प्रश्न समय–समय पर उठता रहा है। इस संदर्भ में आवश्यकता ये है कि हम गांधीजी के विचारों को एक बार पुनः समझने का प्रयास करें। खासतौर पर, सामाजिक न्याय के विषय में उनकी धारणाओं का पुनरावलोकन जरूरी है ताकि समाज की वर्तमान समस्याओं को सुलझाने में मदद मिले। गांधीदर्शन अन्याय और शोषण की समप्ति शांतिपूर्ण व अंहिसात्मक उपाय द्वारा की करना चाहता है। भारत की आजादी इस बात का श्रेष्ठ उदाहरण है कि समाज या व्यवस्था को अहिंसात्मक आंदोलन से भी परिवर्तित किया जा सकता है। अहिंसा मानवीय स्वतंत्रता समानता तथा न्याय के प्रति गांधीजी की प्रतिबद्धता सावधानीपूर्वक व्यक्गित परीक्षण के बाद जीवन के सत्य से पैदा हुई थी। गांधीजी द्वारा निर्देशित अहिंसा का वही मार्ग आज के हिंसादीर्ण समाज लिए और भी अधिक उपयोगी प्रतीत होता है।

सामाजिक न्याय एवं उसकी मांग संबंधी अवधारणा आधुनिक युग की देन है। पीड़ित और पिछड़े वर्ग के लोगों को सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने की प्रक्रिया आधुनिक राष्ट्र के प्रमुख कार्यों में से एक माना जाता

है। औद्योगिक क्रांति के समय से श्रमिकों के प्रति पूंजीपतियों के शोषण के विरोधस्वरूप इस अवधारणा का विकास हुआ। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था मे श्रमिकों की अवस्था में सुधार लाने के उद्देश्य से विश्व भर में जो आंदोलन छेड़ा गया, सामाजिक न्याय की अवधारणा उसी पर आधारित है। उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ में उपनिवेशी शासन के खिलाफ़ विश्व के विभिन्न प्रांतों में आवाजें उठीं और नए–नए स्वाधीन राष्ट्रों की स्थापना हुई। तभी राष्ट्र–व्यवस्था के तहत सामाजिक न्याय की प्रक्रिया को संवैधानिक प्रावधानों में शामिल किया गया। स्वतंत्र भारत में भी विकास के प्रयास सबंधित सभी कार्यक्रम सामाजिक न्याय की धारणा से प्रेरित रहे हैं, ताकि सभी वर्ग, वर्ण, जाति एवं धर्म के लोग अपनी–अपनी मानवीय स्थितियों में सुधार ला सकें।

निष्कर्ष

यह समापन अध्याय इस पूरे खंड में प्रस्तुत प्रमुख विषयों को एक साथ जोड़ता है, बच्चों और युवाओं के लिए सामाजिक न्याय पर पहली पुस्तक जो एक अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य लेती है। इस काम के लिए प्राथमिक निष्कर्ष यह है कि कम विकसित और विकसित देशों में दुनिया भर में बच्चों और युवाओं के लिए सामाजिक अन्याय के साथ महत्वपूर्ण समस्याएं हैं। यह एक मूलभूत मानवाधिकार मुद्दा है जिसे सभी समुदायों में प्राथमिकता दी जानी चाहिए; फिर भी वास्तव में प्रगति बहुत सीमित रही है। जबकि कुछ उभरते हुए साहित्य, महत्वपूर्ण मार्गदर्शक नीति दस्तावेज, और कई नेटवर्क इस काम को गहरा करने की कोशिश कर रहे हैं, इस चुनौती को आगे बढ़ाने के लिए समन्वित प्रयासों की सापेक्ष कमी है, यह सुनिश्चित करने के लिए कि नीतियां और प्रथाएं एक जुड़े एजेंडा का निर्माण करती हैं जो कल्याण को बढ़ावा देती है बच्चों और युवाओं के लिए सामाजिक न्याय का आश्वासन देते हुए। सामाजिक न्याय एक लंबे समय से चली आ रही अवधारणा है जिसका उपयोग सरकारी हस्तक्षेप और संसाधनों के वितरण को सही ठहराने के लिए किया जाता है। यह एक ऐसी नीति है जो बौद्धिक रूप से पर्याप्त है, जो अपने आधुनिक रूप में न्याय के रॉल्सियन सिद्धांत पर आधारित है। हालाँकि, यह एक अवधारणा है जिसका पिछले 30 वर्षों में भारी विरोध हुआ है। लेकिन, इसने अवधारणा को अस्वीकार नहीं किया है, बल्कि एक बदली हुई राजनीतिक वास्तविकता के सामने इसके समायोजन के लिए प्रेरित किया है जिसमें व्यक्तिगत कार्रवाई और व्यक्तिगत जिम्मेदारी को सामने रखा गया है।सामाजिक न्याय ने थैचर काल के बाद कुछ वापसी की है। हालाँकि, अवधारणा के आधार पर बनने वाली नीतियों के प्रकार कुछ भिन्न हैं और इन आलोचकों के प्रभाव को दर्शाते हैं। विशेष रूप से, अब यह स्वीकार किया गया है कि सरकारी नीतियों का व्यक्तिगत व्यवहार पर प्रभाव पड़ता है और यह कुछ हद तक प्रतिकूल रूप से उन लोगों के जीवन को बेहतर बनाने के प्रयासों के खिलाफ कम कर सकता है जो स्वयं की मदद करने में कम से कम सक्षम हैं।

संदर्भ

1. गाबा, ओ. पी. श्राजनीतिदृसिद्धांत की मूल संकल्पनाएं, के.एल. मलिक एण्ड संस प्रा. लि. 23 दरियागंज, नई दिल्ली, 2014

2. रॉल्स, जॉन रू ए थियरी ऑफ जस्टिस. हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस कैम्ब्रिज

3. दाधीच, नरेश । जॉन रॉल्स का न्याय का सिद्धांत, आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2003,

4. सिंह, रामगोपाल रू सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2010

5. गाबा, ओ पी. डायमेंशन ऑफ सोशल जस्टिस, नेशनल पब्लिशिंग

6. गाबा, ओ पी. हाउस, नई दिल्ली, 1983 श्डायमेंशन ऑफ सोशल जस्टिस नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, 1983

7. अकान, वाई।, और तातिक, आर.एस. (2020) छात्रों की नैतिक परिपक्वता, लोकतांत्रिक

8. दृष्टिकोण और लक्ष्य के बीच संबंध व्यवहार विकास के स्तररू एक सहसंबंधी अध्ययन। शैक्षिक विज्ञान के अंतर्राष्ट्रीय ऑनलाइन जर्नल, 12(4), 1–20. डीओआईः https:@@doi-org@10-15345@iojes-2020-04-001

9. अक्कू ई. (2019) ओकुलार्डा सोसायल एडालेटिन गेलिस्टिरिलमेसिन इलिस्किन योनेतिसी, ऑरेटमेन और ऑरेन्सी गोरुस्लेरी।(अप्रकाशित मास्टर की थीसिस), गाजियांटेप यूनिवर्सिटी एसिटिम बिलिमलेरी एनस्टिट्यूस। गाजियांटेप।

10. बार्कर, आर. एल. (1999) सोशल वर्क डिक्शनरी। वाशिंगटन डीसीरू NASW प्रेस।

11. बेल, एलए (2007) सामाजिक न्याय शिक्षा के लिए सैद्धांतिक आधार। एम. एडम्स, एल.ए. बेल, और पी. ग्रिफिन (एड्स),विविधता और सामाजिक न्याय के लिए शिक्षण में (1–14)। लंदन, टेलर और फ्रांसिस समूह।

12. बोगडान आर, सी., और बिकलेन, एस के. (2008) शिक्षा में गुणात्मक अनुसंधान। बोस्टनरू एलिन और बेकन

13. बोगोच, आई. और शील्ड्स, सी.एम. (2014) परिचयः क्या सामाजिक न्याय के वादे शिक्षा के प्रतिमानों को मात देते हैंनेतृत्व? आई, बोगोच और सी.एम. शील्ड्स (एड।), इन इंटरनेशनल हैंडबुक ऑफ एजुकेशनल लीडरशिप औरसामाजिक न्याय खंड 1 (एस. 1–12)। न्यूयॉर्करू स्प्रिंगर

14. बॉयल्स, डी।, कारुसी, टी।, और अटिक, डी। (2009) सामाजिक न्याय की ऐतिहासिक और आलोचनात्मक व्याख्या। डब्ल्यू. आयर्स, टी. क्विन, और डी। स्टोवल (एड।), इन हैंडबुक ऑफ सोशल जस्टिस इन एजुकेशन (एस। 30–42)। न्यूयॉर्क, एनवाईरू रूटलेज।

15. बर्सा, एस। (2015)। सोसायल बिल्गिलर ऑरेटमेनलेरिनिन सोसायल एडलेट एल्गी वे डेनेइमलेरी। (अप्रकाशित मास्टर की थीसिस),अनादोलु विश्वविद्यालय, एसिटिम बिलिमलेरी एनस्टिटुसु, इस्कीसिर।

16. चिउ, एम.एम., और वॉकर, ए. (2007) हांगकांग के स्कूलों में सामाजिक न्याय के लिए नेतृत्वरू तंत्र को संबोधित करना असमानता का। जर्नल ऑफ एजुकेशनल एडमिनिस्ट्रेशन, 45(6),724—739

17. क्रेग, जी। (2002) गरीबी, सामाजिक कार्य और सामाजिक न्याय। ब्रिटिश जर्नल ऑफ सोशल वर्क, 32, 669—682

18. क्रेसवेल, जे.डब्ल्यू. (2014) अरस्तुर्मा देसेनी। (एस.बी. डेमिर, ट्रांस। एड।)। अंकारारू एइटिन किटाप।

19. सेटिन, एच। (2015) सोसायल एडलेट, सोसायल हिजमेटलर और बुत्के। टॉप्लम और सोसयल हिज़मेट, 26(2), 145—157।

20. डेमिरकाया, एच। और फाइनल, ओ। (2018) सोसायल बिलगिलर ऑरेटमेन अडायलारिन कामु हिज़्मेती मोटिवास्योनु अल्गालारि वे सोसायल एडलेट आइडियलेरी। तुर्की अध्ययन, 13(4), 455—474। http:@@DÛ-Doi-Org@10-7827@Turkishstudies-13016A

21. डूंडर, एस। (2010)। अग्रिम—आदेश दिया गया है कि वे पोस्ट मॉडर्नडेकी हैंरू तुर्किये ऑरनेसी। (अप्रकाशितडॉक्टरेट शोध प्रबंध), मरमारा यूनिवर्सिटी, एसिटिम बिलिमलेरी एनस्टिट्यूसु, इस्तांबुल।

22. एलैंडसन, डी.ए., हैरिस, ई.एल., स्किपर, बी.एल., और एलन, एस.डी. (1993)। डूइंग नेचुरलिस्टिक इंक्वायरी: ए गाइड टू मेथड्स।न्यूबरी पार्क, सीएरू सेज पब्लिकेशंस।

23. एर्सॉय, ए.एफ. (2016)। फेनोमेनोलोजी। अहमत सबन और अली एर्सॉय (संस्करण), एइटिमदे नितेल अरस्तुर्मा देसेनलेरी (51—111) में,अंकारारू अनी ययनकिलिकि